ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBIL04292
RNI REG. NO. UPBIL/2014/66218 **PP. No.- 140-142**
I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jant-Mar. 2025

गौतम बुद्ध के शैक्षिक विचारों की वर्तमान समय में उपादेयता का एक अध्ययन

डॉ0 देवेन्द्र कुमार
असिस्टेंट प्रोफेसर, इंस्टीट्यूट ऑफ टीचर एजुकेशन, मोदी नगर, गाजियाबाद (उ0प्र0) भारत

Received-27.02.2025, Revised-05.03.202 Accepted-11.03.2025 **E-mail : dranandkumarsing44@gmail.com**

सारांशः समकालीन शिक्षा स्वरूप उन गरीब बालकों को कोई दूसरा अवसर नहीं प्रदान करती जो इसके संकीर्ण सोच के द्वारा प्रवेश से वंचित रह जाते हैं या जो सामाजिक या आर्थिक कारणों की विवशता से त्रस्त होकर इससे बाहर निकल जाते है, समकालीन शिक्षा संरचना निहित स्वार्थो की सहायता करने को प्रोत्साहित करती है, यथास्थितिवाद को प्रोत्साहन देती है तथा शैक्षिक समानता के अवसरों का गला घोंटती है। वर्तमान कालीन शिक्षा व्यवस्था में जो ज्ञान प्रदान किया जा रहा है वह ज्ञान अगले वर्षो में पिछड़ी मानी जाने लगती है।

कुंजीभूत शब्द– संकीर्ण, त्रस्त, प्रोत्साहित, निहित, निष्क्रिय, ज्ञानवर्धक, संस्कृति, शैक्षिक विचार, उपादेयता, शिक्षा संरचना

प्रस्तावनाः वस्तुतः अधुनातन शिक्षा व्यवस्था ने देश में अनेक भेद एवं विषमताओं को जन्म दिया है अतः वर्तमान शिक्षा संरचना में देश की आवश्यकताओं की पूर्ति में सक्षम नही है, अतएव एक ऐसी शिक्षा संरचना की आवश्यकता है जिससे देश या समाज तथा व्यक्ति की समस्याओं का समाधान कर सकें। यह कार्य बौद्ध काल में वर्णित ज्ञान स्वरूप को अंगीकृत कर सकता है, इस शिक्षा संरचना में समानता का वातावरण था, ऊँच नीच का भेदभाव नहीं था, न ही धनी–निर्धन का भाव। शिक्षा मुक्त हस्त से आचार्यो द्वारा सुयोग्य पात्र को प्रदान की जाती थी, गुरू–शिष्य सम्बन्ध परस्पर सामंजस्यपूर्ण मधुर थे। शिष्य गुरू को यथोचित सम्मान प्रदान करता है। स्त्री शिक्षा तथा शूद्र शिक्षा समान रूप से दी जाती थी, समाज में स्नातक का सम्मानित स्थान था। समाज में एकता का पाठ बौद्ध शिक्षा केन्द्र भली–भांति सफलतापूर्वक पढ़ा रहे थे। अनुसंधानों पर ज्यादा बल प्रदायित था, नवीनतम अनुसंधानों को प्रेरित किया जाता था।

बौद्धकालीन शिक्षा और वर्तमान परिवेश– बौद्धकालीन शिक्षा की वर्तमान या सामायिक परिवेश में प्रासंगिकता की बात की जाय, तो बौद्धकालीन शिक्षा के अनेक गुण वर्तमान परिवेश में बहुत लाभकारी है। बौद्धकालीन शिक्षा के अनेक गुण अभी भी हमारी तालीम में प्रतिबिंबित होते है जैसे सामान्य विद्यालय, सार्वजनिक प्राथमिक शिक्षा, सभी धर्म और जातियों के बालकों हेतु समान शिक्षा का अवसर, महिलाओं हेतु उच्च शिक्षा की व्यवस्था, लौकिक और सामान्य पाठ्यविषयों का ज्ञान प्रदान करने की स्वरूप, वाणिज्य और लाभप्रद विषयों की शिक्षा सैद्धांतिक और प्रयोगात्मक शिक्षा की व्यवस्था, शिक्षा के अनेक स्तरों का विकास, खेल कूद एवं शारीरिक शिक्षा की संरचना, ज्ञान के विभिन्न स्तरों पर अध्यापन की निश्चित अवधि की व्यवस्था इत्यादि गुण वर्तमान समय मे भी हमारी शिक्षा संरचना में बने हुए है। प्रस्तुत विवेचना यह बताती है कि जिस प्रकार आज मनुष्य संस्कारविहिन हो जो रहा है वह पश्चिमी सभ्यता की अंधी दौड़ दौड़ रहा है ऐसे में उसके लिए तथागत बुद्ध द्वारा प्रतिपादित शिक्षाओं की और अधिक आवश्यकता है। भारतीय संस्कृति प्राचीनतम एवं श्रेष्ठतम संस्कृति है।

बौद्धकालीन शिक्षा के उद्देश्य– शिक्षा विकास का वह क्रम है, जो अनेक प्रकार से अपने लौकिक, सामाजिक और पारलौकिक एवं सन्यासी जीवन से शनैः–शनैः सामंजस्य स्थापित करता है तथा अपने आप पर नियन्त्रण करता है। अपने व्यवहारों में परिवर्तन लाता है, तब कालक्रम में उनके पूरे सामाजिक ढांचे में अमूल परिवर्तन हो जाता है। निर्माण का यह क्रम स्थिर नहीं, अपितु गतिशील है। विद्या प्राप्त करने के वजह से ही अनुभवशील व्यक्ति का समाज में दूसरे व्यक्तियो की तुलना में ज्यादा आदर होता है और वह विज्ञान एवं अनुभवी महापुरुषों के विचारों को शीघ्रता तथा सरलता से अनुग्रहीत करता है। इसके द्वारा मानव के भावी जीवन की दिशा तथा समाज की संरचना मूलतः निर्मित होती है। शिक्षा संरचना ज्ञान की तथा और ज्ञान के स्वरूप का समुच्चय है, जो सैद्धान्तिक है। व्यवहारिक दृष्टि से शिक्षा औपचारिक, अनौपचारिक और औपचारिकता से परे उस संरचना क्रम को बनाती है, जिसमें एक शिक्षार्थी ज्ञान, कुशलता, नैतिकता, मूल्य और वैयक्तिक तथा सामाजिक अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण दिशा निर्देश प्राप्त करता है।

वर्तमान शैक्षिक स्वरुप में, शिक्षा के हालात पर नजर डालने पर मालूम होता है कि देश विशेष की राजनीति और राजनैतिक दर्शन शैक्षणिक व्यवहार जगत के उद्देश्यों को व्यवस्थित करता है। राष्ट्रीय हित की पूर्ति के लिए जिन कार्यक्रमों की जरुरत होती है, उनके निर्देशन के लिए शैक्षणिक कार्यक्रम की रूपरेखा प्रस्थापित करना जरूरी है। इसमें आधुनिक शिक्षा वर्तमान जरुरतो के मुताबिक करने में पूर्णतः सफल नहीं हो पा रही है, जिसके दुष्प्रभाव मानवीय सम्बन्धों में सैद्धान्तिक और व्यवहारिक दोनों संदर्भों में सर्वाधिक अभिव्यक्त होते हैं। मानव विकास ज्ञान प्रकिया का मूलआधार रहा है।

इस शिक्षण व्यवस्था के अध्ययन करने से मालूम होता है कि बौद्धकाल के शिक्षा–दर्शन की उपादेयता सदैव बनी रहेगी। इस दर्शन का लक्ष्य आज के शिक्षा के समान नही है। बौद्ध समय में भी शिक्षार्थी के विकास को प्रयत्न होता था। तथा संस्थाएँ स्वतंत्र रूप से अध्ययन–अध्यापन कार्य करती थीं तथा बालक को श्रेष्ठ अनुभव देने का प्रयत्न करती थीं। बालकों को ऐसे आचरण की सीख दी जाती थी जिससे उसके मस्तिष्क को स्थिरता व शान्ति प्राप्त हो सके। बौद्धकालीन शिक्षा में शान्ति, अहिंसा व वसुधैव कुटुम्बकम् के सिद्धान्त तथा प्रजातान्त्रिक संगठन की प्रवृत्ति निहित थी।

सामायिक परिवेश और बौद्धकालीन शिक्षा में अनुशासन– अनुशासन की पहली पाठशाला परिवार होता है और दूसरी विद्यालय। इसके बिना एक सभ्य समाज की कल्पना करना दुष्कर है। एक स्वस्थ समाज के निर्माण और संचालन में उस आबादी का बड़ा हाथ होता है, जो अपने किसी भी रूप में अनुशासनरूपी सूत्र में गुंथे होने से संभव हो पाता है। शिक्षा का उद्देश्य समाज को बेहतर नागरिक प्रदान करना होता है, जो स्वस्थ समाज के निर्माण में भागीदार बनें। अनुशासन का लक्ष्य शिक्षा में नैतिकता का समर्थन करना है तो भले ही अनुशासन की पहली पाठशाला परिवार होता है, पर एक स्वस्थ समाज के निर्माण में निर्णायक भूमिका उसके विद्यालय निभाते हैं।

सामायिक परिवेश और बौद्धकालीन शिक्षक– बौद्धकाल में गुरू का स्थान महत्वपुर्ण था प्रत्येक विद्यार्थी के लिए किसी को गुरू बनाना अनिवार्य था इस प्रणाली में गुरूओं के अधीन अनेक छात्रों का समूह ज्ञान प्राप्त करने का काम करते थे। शिक्षण संस्थानों मे आपसी सम्बन्ध सुदृढ़ रखने हेतु गुरूओं द्वारा अनेक विधान निपत किये जाते थे। अनेक छात्र जो बाद में शिक्षण का काम करनें को

अनुरूपी लेखक/ संयुक्त लेखक

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jant-Mar. 2025

इच्छुक रहते थे उन्हें उपाध्याय कहा जाता था इस दर्शन के अनुसार उसी व्यक्ति को शिक्षक बनने का सौभाग्य प्राप्त होता था। जिसे चारो आर्यों के सत्य का ज्ञान हो जाता था और वह अष्टांगिक मार्ग का अनुसरण करता था। जैसे छात्रों से यह उम्मीद रखी जाती थी कि वह सद्व्यवहार करे। ठिक उसी प्रकार शिक्षकों से आशा की जाती थी कि वह अच्छा चरित्र विद्वता आदि को प्रदर्शित करे। उसका कर्तव्य था कि वह अपने छात्रों मे ज्ञान के भण्डार समावेश करने के साथ ही विद्यार्थियों से किसी बात को न छुपायें। छात्र के दुगुर्णों का उत्तरदायी गुरू को माना जाता है आज बड़े–बड़े विद्यालय सरकार द्वारा खोल दिये गये हैं अथवा जनता द्वारा खोले गए विद्यालयों को मान्यता मिल गई है, जिसमें सैकड़ों शिक्षा प्रेमियों को सामूहिक रूप से शिक्षण व्यवस्था रहती है। समस्त छात्रों की मनोवृत्ति को समझना एक अध्यापक के लिए बहुत कठिन है। कक्षा में अच्छे तथा बुरे, प्रबुद्ध तथा मूर्ख सभी प्रकार के विद्यार्थी होते हैं। सभी बालकों को एक साथ एक ही अध्ययन विधि से एक ही अध्याय का अध्यापन किया जाता है। अतः ऐसी स्थिति में अध्यापक के लिए यह सम्भव नहीं है कि वह प्रत्येक छात्र से व्यक्तिगत सम्बन्ध बना सके। सभी बालकों के ज्ञान की परीक्षा ले सके। किसी एक छात्र की समस्या का निदान नहीं हो पाता है। जब समस्या सम्पूर्ण कक्षा की होती है या कोई भी आवश्यकता सम्पूर्ण कक्षा की होती है, तभी उसका समाधान होता है। इसका निष्कर्ष यह होता है अध्यापक एंव छात्र के बीच व्यक्तिगत सम्बन्ध स्थापित नहीं हो पाता है। वर्तमान शिक्षा जिसमें अध्यापक सरकारी, अर्धसरकारी कर्मचारी की भांति प्राप्त होने वाले पारिश्रमिक को वास्तविक लाभ के रूप में संदर्भित करके अपने कर्तव्यों का अनुपालन कर रहे हैं। सामाजिक व्यवस्था में शैक्षिक संस्थाओं की गतिशीलता बनाये रखने तथा निजी हित की पूर्ति के लिए विभिन्न प्रपंअ्चों का आश्रय ले रहे हैं। कुछ मानवीय विचारधाराओं के आचार्य अपने अध्ययन के नैतिक परिवेश को यथावत् चाहते हैं, तो अधिकांशतः विद्यालय को रोजगार के स्थल के रूप में नियमित समय में पाठ्यक्रमों को पूरा करने का उत्तरदायित्व किसी प्रकार वहन करते हैं। शैक्षिक परिवेश की वर्तमान परिस्थितियाँ जिन अनैतिक मूल्यों, असमायोजित युवाओं और असंतुलित व्यक्तित्व को उत्पादित कर रही है, उसका मूल वजह अध्यापकों में अभिभावकत्व की कमी का होना है।

वर्तमान समय में अध्यापक व विद्यार्थी को अपने–अपने दायित्वों को समझने की आवश्यकता है। विद्यार्थी को अपने अध्यापक के प्रति आस्थावान होना होगा तथा अध्यापक को अभिभावक की जिम्मेदारी निभानी चाहिए। वर्तमान समय में नौकरी प्राप्ति के प्रति विद्यार्थी की आशक्ति के वजह से वह रोजगार परक शिक्षा को महत्व देता है। बौद्धकालीन शिक्षा–संरचना में विद्यार्थी विद्या के खोजी और ज्ञान के शोधक होते थे। जिसको पाने के लिए उसे सतत् प्रयत्न करना पड़ता था। विद्यार्थी सादा जीवन उच्च–विचार की भावना को लेकर चलता था। शास्त्रार्थ के द्वारा विद्यार्थी के ज्ञान का सही आकलन होता था। इसमें उपाधियों या प्रमाण–पत्रों द्वारा शिक्षार्थी की क्षमता का आकलन नहीं होता था। वर्तमान समय में परीक्षाएँ उत्तीर्ण करके विद्यार्थी उपाधि प्राप्त करता है। इसमें उपाधियों के लोभ के लिए नहीं बल्कि ज्ञान पिपासा की परिशान्ति के लिए छात्र ज्ञानार्जन करते थे। इस प्रकार बौद्ध–शिक्षा प्रणाली में परीक्षाओं का उल्लेख नहीं प्राप्त होता है। समकालीन शिक्षा स्वरूप में परीक्षा का खास स्थान है जो कि एक सुनिश्चित पद्धति है। विद्यार्थी परीक्षा पास करने में अधिक रूचि लेते हैं। अधिकांश विश्व–विद्यालयों में वर्तमान परीक्षा का स्वरूप छात्रों को बुद्धिमान तथा विषय ग्राह्यता की अपेक्षा स्मरण शक्ति के प्रदर्शन को उत्साहित करती है।

वर्तमान युग में छात्रों की अनुशासनहींनता से अध्यापक तथा अभिभावक सभी परेशान है। आज बालकों में व्याप्त असंतोष, क्षोभ और विद्रोह से सम्पूर्ण देश आक्रान्त है। आज के विद्यार्थियों के मन से शिक्षकों के प्रति आदर और श्रद्धाभाव कम होता जा रहा है। छात्र अनुशासनहींन हो गये हैं और अनुशासनहींनता विद्या की एक जटिल समस्या बन गयी है। सभी संस्थाएँ छात्रों की अनुशासनहींनता के कारण सुचारू रूप से नहीं चल पा रही है। वर्तमान शैक्षिक परिवेश को अनुशासनमय बनाने के लिए बौद्धकालीन अनुशासन व्यवस्था काफी कुछ कारगर सिद्ध हो सकती है।

शैक्षिक निहितार्थ– बौद्ध दर्शन न तो केवल भौतिकवादी है और न केवल आध्यात्मिक है इसने मध्यमा प्रतिपदा सिद्धान्त का अनुसरण किया है एक दर्शन के रूप में इसके अनेक सिद्धान्त उपनिषदीय दर्शन से बड़ा मेल खाते हैं। जैसे भव प्रपंच के मूल में अज्ञान का वजह होना, तथा कर्म सिद्धान्त की विस्तारपना, परन्तु अनात्मवाद, क्षणिकवाद तथा शून्यवाद के सिद्धान्त पूरी तरह से उपनिषद विरोधी हैं अनात्मवादी होने के वजह से ही भारतीय भूमि पर ज्यादा दिनों तक टिक न सका। किन्तु एक शिक्षा दर्शन के रूप में यह भारत के लोगों को स्पर्श किया है तथा शिक्षा के क्षेत्र मे जो काम भारत वर्ष के दूसरे दर्शन न कर सके, वह काम इस दर्शन ने किये हैं।

बौद्ध दार्शनिकों ने शिक्षा के हेतु अनेक प्रभावी विधियों का विकास किया है। व्यक्तिगत शिक्षा हेतु स्वाध्याय, मनन और चिन्तन व सामूहिक शिक्षण के लिए व्याख्यान, व्याख्या और चर्चा विधियां आज भी श्रेष्ठ विधियां स्वीकार की गई है। वास्तविक ज्ञान हेतु आज कुछ विद्वतजन शास्त्रार्थ को उचित भले ही न स्वीकारते हो हों परन्तु पर्यटन और सम्मेलन तो वर्तमान में भी स्वीकार योग्य है।

बौद्धों ने सभी लोगो को नियमों के अनुसरण करने का उद्देश्य दिया है और इसी को वे अनुशासन कहते हैं। बौद्धों की अनुशासन सम्बन्धी यह अवधारण आज लोकतन्त्रीय जीवन के लिए बड़ी आवश्यक है। लोकतन्त्र की सफलता तो इसी तथ्य पर निर्भर है कि सभी लोग स्वयं के कर्तव्यों का पालन ईमानदारी और निष्ठा के साथ करें। अध्यापक तथा छात्र दोनों को संयमी जीवन की सुझाव देकर बौद्धों ने शिक्षा जगत को शुद्धता प्रदान की थी उसकी प्रासंगिकता वर्तमान में भी महसूस कि जा रही है। प्रायः आज के अध्यापक और शिक्षार्थी संयमी जीवन शैली जीना प्रारम्भ कर दें तो शिक्षा जगत की सभी बाधाये आने आप हल हो जायेगी।

बौद्ध दार्शनिक जन्म के आधार पर मनुष्य–मनुष्य में भेद नहीं करते इसलिए उन्होंने समाज के लिए प्रारम्भिक शिक्षा का विधान किया है। अतः इससे मालूम होता है कि वे जन शिक्षा के समर्थक हैं। परन्तु मानसिक व बौद्धिक नजर से वे मानव–मानव में भेद करते है और उच्च शिक्षा की व्यवस्था केवल मेधावी एवं योग्य छात्रों के लिए ही करते हैं। यद्यपि तत्कालीन शिक्षा और आधुनिक शिक्षा के बीच कई सैकड़ों वर्षो का अन्तर है लेकिन बौद्धकालीन शिक्षा की अनेकों ऐसी अनेक विशेषताएँ जिन्हें सैद्धान्तिक और कौशलात्मक तरीके से समकालीन शिक्षा में समाहित हो सकता है। आधुनिक शिक्षा प्रणाली यद्यपि बौद्धकालीन शिक्षा प्रणाली से पूर्णतः अलग प्रतीत होती है, किन्तु वर्तमान शिक्षा को प्रबन्धित करने और विभिन्न प्रकार की दुष्वारीयों के निदान खोजने में बौद्ध कालीन शिक्षा सहायता प्रदान कर सकती है। इसके आदर्शों अर्थात् श्रद्धा, भक्ति, सेवा, सम्मान, आत्मानुशासन, सादा जीवन ब्रह्मचर्य, नैतिक आदि को अपनाकर करके वर्तमान आवश्यकताओं के अनुरूप ज्ञान अवस्थापन हो सकती है। छात्र असंतोष, अनुशासनहीनता, बेरोजगारी, निर्धनता, जाति, राष्ट्रीय एकता, भाषा सम्बन्धी भेदभाव जैसी अनुत्तरित समस्यायें दिन प्रतिदिन भयंकर परिणाम ला रही है। वैदिक कालीन शिक्षा को अपनाने से ही पूर्व की भाँति विदेशी छात्रों को अपनी ओर आकर्षित कर सकेगी।

I S S N NO. - 2347 – 2944 (Print)
e-I S S N NO.- 2582 – 2454 (Online)
Vol.-19, No.-I, Issues-35, YEAR-Jant-Mar. 2025

बौद्धकालीन शिक्षा से अर्थ है। उच्च विचारों, स्वानुशासन, स्नेह व श्रद्धा पर आधारित गुरू–शिष्य सम्बंध, नगरों के कोलाहल से दूर माहौल, समूह व्यस्त दिनचर्या, सगुण आदतों का निर्माण, मानवता एवं विश्वबंधुत्व के मनोदशा से परिपूर्ण पाठ्यवस्तु, प्रश्नोत्तर व शास्त्रार्थ तरीकों का अनुप्रयोग सरल दुर्व्यसनों से दूर जीवन यापन आदि अनेक ऐसी बातें हैं जो आज भी शैक्षिक दृष्टि से सर्वाधिक महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती हैं।

आज के भारतवर्ष में उनका जीवन भले पूर्णतया अनुसरण योग्य न हो पर अपनाने योग्य अवश्य है। वर्तमान समय के विद्यार्थियों के जीवन कुछ न कुछ बदलाव हो गया है उनके जीवन का मुख्य लक्ष्य शिक्षा प्राप्त करना न होकर मनोरंजन के विभिन्न स्त्रोंतों की अनुसंधान है। ऐसे में उनका जीवन ऐश्वर्य प्रधान व विकासिकता पूर्ण हो गया है। ऐसी दशा में प्राचीन काल के विद्यार्थियों के दृष्टान्त को वर्तमान के बालको के सम्मुख रखकर उनकी सोच में परिवर्तन करना नितान्त जरूरी है।

निष्कर्ष– वर्तमान भारतीय शिक्षा संरचना धर्मनिरपेक्ष तथा लोकतान्त्रिक है। आज के शिक्षा के पाठ्यचर्या में अनेक पाठ्य विषयवस्तु शामिल किये हैं जो व्यवसाय तथा उपरयोगी है आधुनिक नजर से आज का विषय क्यों न उपयोगी माना जाय, किन्तु अनेक विषयों की उपेक्षा यहां स्पष्ट परिलक्षित होती है। बौद्धकालिन साहित्य मूलतः शाश्वत साहित्य है जिसमें मानवीयता, विश्वबन्धुत्व, तथा मानव शान्ति के तथा समाहित है। वर्तमान पाठ्क्रम में इन्हें शामिल होना चाहिए। बौद्धकालिन पाठ्यचर्या में ऐसे बहुत से प्रकरण है जिसे आज के शिक्षा में समाहित किया जा सकता है। ये वर्तमान भारत वर्ष के सांस्कृतिक, नैतिक व आध्यात्मिक प्रगति और विश्व शान्ति की पुर्नस्थापना में सहयोगी हो सकते हैं। यह कहना उचित होगा कि बौद्ध युगीन पद्धति तत्कालीन संसार की श्रेष्ठतम शिक्षा प्रणाली थी किन्तु आज के भारतवर्ष के समाज की संरचना तथा उसके भविष्य की आवश्यकताओं की दृष्टि से कुछ तत्व ग्रहणिय है तथा कुछ व्यागने योग्य है ग्रहणीय तत्वों को हम गुण कह सकते हैं तथा व्याग ने योग्य गुणों का दोष कहते हैं। बौद्धकालिन शिक्षा प्रणाली के प्रमुख ग्रहणीय तत्व है, निःशुल्क शिक्षा, विस्तृत उददेश्य, विस्तृत पाठ्चर्या, आचार्य–शिष्य का आत्मानुशासित जीवन, आचार्य–शिष्य के बीच मधुर सम्बन्ध तथा शिक्षा केन्द्रों की संस्कार प्रधान पद्धति और न ग्रहण करने योग्य तत्व है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. बंदोपाध्याय, आर. (1991). एजुकेशन फार ऐन इन्लाईटेंट सोसाइटी, इकोनामिक एंड पालिटिकल विकली, भाग–26,पृष्ठ 132.
2. पाण्डेय, डॉ0 गोविन्द चन्द्र, (1973) बौद्धधर्म के विकास का इतिहास हिन्दी समिति, सूचना विभाग, उ0प्र0 लखनऊ, पृष्ठ 213.
3. श्रीमाली, के. एल. (1986). प्लानिंग फार एजुकेशन एंड एजुकेशनल आपर्चुनीटी, पी.एल. मल्होत्रा द्वारा सम्पादित, पृष्ठ 112.
4. राय, राम कुमार, (1969). बौद्ध न्याय, भाग–1 व 2 चौखम्भा विद्या भवन, वाराणसी, पृष्ठ 156.
5. उपाध्याय, बलदेव, (1966). भारतीय दर्शन शारदा मंदिर, वाराणसी, पृष्ठ 12.
6. उपाध्याय, भरतसिंह, (2011). बौद्ध दर्शन तथा अन्य भारतीयप्रकाशक, हिन्दी मण्डल वि0 सं0 पृष्ठ 67.
7. पाण्डेय डा0 शैलेश कुमार (2017) वर्तमान शैक्षिक व्यवस्था में बौद्ध दर्शन की शिक्षा की आवश्यकता :एक अध्ययन, असिस्टेंट प्रोफेसर (बी0एड0 विभाग),एम.डी.पी.जी. कालेज. प्रतापगढ़(उ0प्र0), रिसर्च पेपर।
8. देवी, गीता, (1982). उत्तर भारत में शिक्षा व्यवस्था, इंडियन प्रेस पब्लिकेशन प्राइवेट लिमिटेड, इलाहाबाद, पृष्ठ 112.
9. वर्मा, वैधनाथ प्रसाद, (1999). शिक्षाशास्त्र, विहार हिंदी ग्रन्थ अकादमी पटना, पृष्ठ 211.
10. त्यागी, महावीर सिंह, (1985). भारत का इतिहास, विनोद, पुस्तक मंदिर, आगरा, पृष्ठ 146.
11. आचार्य नरेन्द्रदेव, (2013). बौद्धधर्म दर्शन बिहार राष्ट्रभाषा परिषद, पटना, वि0सं0 पृष्ठ 124.
12. आचार्य, पी. (1988). इज मैकाले स्टिल आवर गुरु, इकोनामिक एंड पालिटिकल विकली, भाग–23, पृष्ठ 81.
13. ओड़, एल.के. (1988). शिक्षा के नूतन आयाम, हिंदी ग्रन्थ अकादमी, राजस्थान, पृष्ठ 19.
14. ओड़, एल.के. (1994). शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि, हिंदी ग्रन्थ अकादमी, राजस्थान पृष्ठ, 123.
15. अल्टेकर, ए.एस. (1980). प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, मनोहर प्रकाशन, वाराणसी पृष्ठ, 176.

*****